**ओ३म्**

**‘वेदों के स्वतः प्रमाण होने की मान्यता के उद्घोषक व**

**प्रचारक ऋषि दयानन्द इतिहास में प्रथम व्यक्ति’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से स्वतः प्रमाण हैं। अन्य सभी ग्रन्थ वेदानुकूल होने पर प्रमाण और वेद विरुद्ध होने पर अप्रमाण होने की कसौटी ऋषि दयानन्द ने महाभारत-काल के बाद देश और विश्व को दी जो उन्हें अपने विद्या गुरु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से प्राप्त हुई थी। ऋषि दयानन्द वेद विषयक इस तथ्य को इसलिए जान सके कि वह प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द के शिष्य थे। महाभारत के बाद देश में वेदों के नाम पर अनेक मिथ्या मतों व परम्पराओं की शुरुआत हुई। कभी किसी ने यह देखने की आवश्यकता अनुभव नहीं की वह सब मान्यतायें व परम्परायें वस्तुतः वेद में हैं भी वा नहीं? महाभारत-काल के बाद देश में वेद ज्ञानियों की संख्या भी प्रायः समाप्त हो गई थी। वेदों के मन्त्रों के सत्यार्थ को जानने वाले लोग देश में नहीं थे। वेद के नाम पर यज्ञों में हिंसा की जाती रही, स्त्रियों और शूद्रों का वेदाध्ययन वेदों के आधार पर ही निषिद्ध कर दिया गया परन्तु कभी किसी ने इसके पोषक विद्वानों से इनके वेदानुकूल होने का न तो प्रमाण मांगा और न हि स्वयं वेदाध्ययन कर इन व ऐसी सभी अवैदिक मान्यताओं को वेद विरुद्ध सिद्ध करने का प्रयास किया। बताते हैं कि महात्मा बुद्ध ने यज्ञों में पशु हिंसा का विरोध किया। उन्हें जब यह कहा गया कि इसका विधान वेदों में है, तो उन्होंने इस पर बिना वेद देखे और स्वयं परीक्षा किये इसे स्वीकार कर लिया और कहा कि मैं ऐसे वेदों को नहीं मानता। यदि महात्मा बुद्ध इस मान्यता की स्वयं परीक्षा करते व कराते तो उन्हें नये मत के प्रचार की आवश्यकता न पड़ती, उनका अंहिसा का उद्देश्य पूरा हो जाता और सभी अवैदिक परम्पराओं पर पूर्ण विराम लग सकता था। उनके बाद स्वामी शंकराचार्य जी का आविर्भाव होता है। वह वेदों के अनुयायी और प्रचारक थे। उन्होंने वेदान्त का अपनी मान्यतानुसार के अनुसार प्रचार किया जिसमें उन्होंने संसार में विद्यमान ईश्वर, जीव और प्रकृति, इन तीन सत्य, सनातन और शाश्वत सत्ताओं को न मानकर केवल ईश्वर अर्थात् ब्रह्म को ही स्वीकार कर उसका प्रचार किया और इसी मान्यता के अनुरुप वेदान्त दर्शन, गीता और उपनिषदों के भाष्य रचे। स्वामी शंकराचार्य जी के बाद देश में शैव, वैष्णव व शाक्त तथा वाममार्गी सम्प्रदायों का आविर्भाव हुआ। इन लोगों ने भी वैदिक मान्यताओं के विपरीत अपने-अपने मत के पुराण आदि बनाये और उसी के आधार पर मूर्तिपूजा आदि अनेकानेक वेद विरुद्ध कृत्यों को करते रहे। इन्हें भी शायद किसी विद्वान ने यह चुनौती नही दी कि यह वेद विरुद्ध कृत्य होने से अनुचित एवं अग्राह्य, अप्रमाणिक व अप्रशस्त है। इस प्रकार अविद्या का अन्धकार बढ़ता रहा और देश विदेश में नाना मत व सम्प्रदायों का आविर्भाव हुआ जिन्होंने अपने-अपने मत व सम्प्रदाय का प्रचार व प्रभाव बढ़ाने के लिए हिंसा तक का सहारा लिया जबकि किसी निर्दोष मनुष्य व पशु की धर्म के नाम पर हिंसा करना महापाप की कोटि में आता है।

 हमें लगता है कि गुरु विरजानन्द जी को अपने पुरुषार्थ, तप व साधना से इस तथ्य का ज्ञान हुआ कि संसार के सभी धार्मिक ग्रन्थ सच्चे महापुरुष ऋषियों के सत्य सिद्धान्तों की आलोचना, विरोध व निन्दा आदि अवगुणों से भरे हुए हैं। वेद और वैदिक ऋषियों के ग्रन्थ साम्प्रदायिक ग्रन्थों की तुलना में प्रशस्त एवं प्रमाण हैं जिसमें ईश्वर, जीवात्मा और प्रकृति विषयक सत्य मान्यताओं का प्रतिपादन है। ऋषि दयानन्द को वेदानुकूल मान्यताओं के ही सत्य होने की कसौटी अपने गुरु विरजानन्द से प्राप्त हुई जिसका उन्होंने और अधिक संवर्धन किया तथा अनेक प्रमाणों व युक्तियों से उसे पुष्ट व सर्वग्राह्य बनाने का प्रयास किया। **उनका सिद्धान्त था कि वेद स्वतः प्रमाण है और वेदतर सभी ग्रन्थ वेदानुकूल होने पर परतः प्रमाण होने की कोटि में आते हैं। वेद विरुद्ध मत को उन्होंने त्याज्य व अस्वीकार्य बताया। इस कार्य में ऋषि दयानन्द सफल हुए, ऐसा उनके ग्रन्थों व साहित्य को देखकर स्पष्ट होता है।**

 **महर्षि दयानन्द के वेदों को परम धर्म व स्वतः प्रमाण मानने, वेदतर ग्रन्थों को वेदानुकूल होने पर ही परतः प्रमाण स्वीकार करने और वेदविरुद्ध मान्यताओं व सिद्धान्तों को त्याज्य बताने के सिद्धान्त के कारण ऋषि हमें महाभारतकाल के बाद अपूर्व, एकमात्र वेदभक्त, उच्च कोटि के ज्ञानी एवं तत्ववेत्ता ऋषि दृष्टिगोचर होते हैं जिनकी तुलना में हमें उपलब्ध वैदिक साहित्य में अन्य कोई महापुरुष दृष्टिगोचर नही होता।** हमें यह देखकर भी आश्चर्य होता है कि ऋषि दयानन्द के समय में देश में कहीं, किसी एक स्थान पर, वेद संहितायें व वेदों का प्रमाणिक संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में भाष्य उपलब्ध नहीं था। इसके विपरीत कुछ ब्राह्मणों के पास हस्तलिखित आंशिक मन्त्र संहितायें व सायण आदि भाष्य की पाण्डुलिपियों के होने की आशा की जा सकती थी। यह तथ्य भी हमें हैरान करता है कि वैदिक धर्म व संस्कृति को भ्रष्ट व नष्ट करने के लिए अंग्रेजी सरकार के प्रमुख उच्च अधिकारी लार्ड मैकाले द्वारा प्रो. मैक्समूलर (6 दिसम्बर, 1823-28 दिसम्बर, 1900 ई.) से कराया गया अंग्रेजी भाषा में वेदों का सायण कृत भाष्य इंग्लैण्ड में उपलब्ध था। इस भाष्य के भारत में एकाधिक पादरियों के पास उपलब्ध होने की आशा की जा सकती थी। यह सायण भाष्य वेदों की मूल भावना व अर्थों से विपरीत लौकिक संस्कृत के आधार पर किया गया भाष्य था जिसमें अष्टाध्यायी-महाभाष्य-निरुक्त के प्रमाणों की उपेक्षा कर उनके व्यवहारिक अर्थों की अनदेखी की गई थी और इसे केवल यज्ञपरक अर्थों तक ही सीमित माना था। महर्षि दयानन्द ने गुरु विरजानन्द से अध्ययन करते हुए सायण भाष्य की निस्सारता व अप्रमाणिकता को भी जाना था। गुरु विरजानन्द से अध्ययन करने से वह अष्टाध्यायी-महाभाष्य-निरुक्त पद्धति के प्रमाणिक विद्वान ही नहीं बने अपितु अपनी योगविद्या व अभ्यास के कारण वह ईश्वर की कृपा से वेदों के साक्षात सत्य अर्थों को जान सके थे। **अतः वेद प्रचार के कठिन व जटिल कार्य को उन्होंने अपने गुरु की प्रेरणा पर करने का निर्णय व संकल्प किया और उसे अपने प्राणपण से अन्तिम समय तक निभाया।**

 महर्षि दयानन्द जी ने वेदों के प्रचार का निर्णय सन् 1863 में ही ले लिया था। उनका यह निर्णय हम अपनी भाषा में एक जोखिम भरा निर्णय कह सकते हैं। वेद न तो हिन्दी में और न ही लौकिक संस्कृत में थे जिनका प्रचार आसानी से किया जा सकता है। दूसरी बात यह थी वेद देश में कहीं उपलब्ध नहीं थे जिसे लोग देख व पढ़ऋ सकते हों। वेदों की भाषा अलौकिक, ईश्वर की अपनी भाषा जो संस्कृत के ही समान और उसके अर्थ व भाव दृष्टि से कुछभिन्न भी थी, उस भाषा में थे जिसे देश के लोग और संस्कृत के बड़े बड़े विद्वान भी पूर्णतः व अंशतः जानते नहीं थे। ऐसी पुस्तक व उसकी मान्यताओं का प्रचार करना और सभी मतों, पन्थों और सम्प्रदायों को चुनौती देना एक बहुत ही आश्चर्यजनक और वीरता का काम था। वह जानते थे कि इसे न तो शासक अंग्रेज ही पसन्द करेंगे क्योंकि वह ईसाईयत के पक्षधर थे और भारत को इसी मत में बदलना चाहते थे। प्रो. मैक्समूलर आदि व चर्च के पादरियों को इसी काम पर लगाया गया था। इसी प्रकार से मुस्लिम मत वाले कभी महर्षि दयानन्द की सत्य व यथार्थ बातों को पसन्द नहीं करेंगे क्योंकि इससे उनके हितों को लाभ नहीं होना था। ऐसी ही स्थिति सभी मत-मतान्तरों की थी। ऐसा होने पर भी महर्षि दयानन्द ने वेदों को धर्म ग्रन्थ के रूप में, उसके गुणों व महत्व के कारण, स्वीकार कर देशवासियों व मत-पन्थ-सम्प्रदाय-वादियों को आश्चर्य में डाल दिया था। यह निर्धारित करते समय उन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि वह भविष्य सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय सहित वेदों का भाष्य भी करेंगे और आर्यसमाज जैसे आन्दोलन व संगठन को जन्म देंगे। यह सब कार्य तो देश- काल-परिस्थितियों के कारण हुआ। अतः हमें महर्षि दयानन्द के वेद प्रचार के पीछे उनकी, उनके गुरु की और ईश्वर की ही इच्छा का होना प्रतीत होता है।

 महर्षि दयानन्द ने वेद प्रचार का निर्णय कर वेदों को ईश्वरीय ज्ञान, सूर्य के समान स्वतः प्रमाण, अन्य ग्रन्थ वेदानुकूल होने पर परतः प्रमाण, वेदों को सब सत्य विद्याओं की पुस्तक तथा वेद विरुद्ध ग्रन्थों और मान्यताओं का अप्रमाण होने की घोषणा की। उनका यह कार्य अभूतपूर्व होने के साथ उनके महान व अपूर्व व्यक्तित्व का परिचय भी कराता है। **आज महर्षि दयानन्द के पुरुषार्थ और ईश्वर की कृपा से देश विदेश में वेद, ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के करोड़ों वा लाखों अनुयायी हैं। सभी वेदों को अपना धर्म ग्रन्थ मानते हैं। ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज द्वारा प्रवर्तित यह वेदमत संसार का ऐसा पहला मत व धर्म है जो सभी मत-पन्थों को वेदों की परीक्षा, वार्तालाप, शंका-समाधान और शास्त्रार्थ करने का अवसर देता है।** आर्यसमाज अन्य मतों का आह्वान भी करता है कि वह वेदों व अपने-अपने मत की परीक्षा के लिए आर्यसमाज के विद्वानों से वार्तालाप व शास्त्रार्थ कर सकते हैं। इस कार्य में अन्य मतों के प्रवृत्त न होने से ही ज्ञात हो जाता है कि सब अपने-अपने मत की कमियों को जानते हैं और वेदमत की सत्यता को भी सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों के अध्ययन के कारण समझते हैं। यही कारण है कि कोई वेदेां पर आक्षेप नहीं करता और न उत्तर मांगता है। इसी से वेद दिग्विजयी सिद्ध होता है। हम आर्यसमाज के पुराने विद्वानों व प्रचारकों का धन्यवाद करते हैं जिन्होंने अपना तन-मन-धन ऋषि दयानन्द और वेद मत के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में लगाया। इन विद्वानों ने ऋषि दयानन्द की पुस्तकों के अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत व अन्य देशी व विदेशी भाषाओं में अनुवाद कर लोगों को वेदों व उनके सिद्धान्तों की परीक्षा का अवसर दिया। वेदों के सिद्धान्त व मान्यतायें आधुनिक युग में भी विज्ञान, तर्क व युक्ति की कसौटी पर सत्य सिद्ध होती हैं। सृष्टि रचना वा उत्पत्ति का विज्ञान व सत्य कथन भी वेदों में मिलता है जो कि अन्य संसार के किसी मत व पन्थ की पुस्तक में नहीं मिलता। इसी कारण वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक व धर्म ग्रन्थ सिद्ध होते हैं।

 हम महर्षि दयानन्द का वेदों को परम धर्म व स्वतः प्रमाण बताने व उसका देश व विदेश में प्रचार करने और **’कृण्वन्तो विश्वमार्यम्’** लक्ष्य की पूर्ति के लिए स्वयं काम करने व दूसरों को प्रेरित करने के लिए भी धन्यवाद करते हैं। **‘जो बोले सो अभय वैदिक धर्म की जय’ तथा ‘ऋषि दयानन्द की जय’** के घोष के साथ लेख को विराम देते हैं।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**